तो अपना ग़म भूलिए , दुःख भूलिए , बस धीरज की डोरी से बंधे रहिए !

इस कोरोना काल में स्थितियां सचमुच बहुत कठिन हैं। अरण्य काण्ड में सती अनुसूइया द्वारा सीता को दी गई सीख में तुलसी दास ने लिखा ज़रूर है :

धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपद काल परिखिअहिं चारी।।
बृद्ध रोगबस जड़ धनहीना। अंध बधिर क्रोधी अति दीना।।

तो धीरज धर्म मित्र अरु नारी में से सिर्फ़ धीरज ही अब आप के हाथ में है। बाक़ी तीन तत्व विदा हो गए हैं। कोरोना हो जाने पर एक ही घर में रहते हुए भी पति-पत्नी भी अकेले हो जा रहे हैं। क्वारंटाइन से यह स्थिति बन गई है। बंधु , मित्र , परिजन सभी इस आपदा में बिछड़ गए हैं। अगल-बगल रहते हुए भी सब दूर-दूर हैं। शव को चार कंधे नहीं मिल रहे। डाक्टर , कंपाउंडर पैसा ले कर भी छू नहीं रहे। यह सिर्फ़ सिस्टम ही नहीं , समाज की भी मार है।

किसी को इंजेक्शन लगवाना , कोई जांच करवाना भी कठिन है। कुल मिला कर सिर्फ़ और सिर्फ़ धीरज नाम का एक शब्द भर रह गया है आदमी के पास। बस धीरज ही आप को बचा सकता है। मैं कई सारे उन अकेले रह रहे , रिटायर हो चुके दंपतियों को देख रहा हूं। जिन के बच्चे बाहर रह रहे हैं। सेटल्ड हो चुके हैं या पढ़-लिख रहे हैं। उन अकेले रह रहे सीनियर सिटीजन में से किसी एक भी को कोरोना या कोई अन्य बीमारी भी हो जा रही है , उन की यातना तोड़ देती है। सारा हरा-भरा घर बेमानी हो जा रहा है। इन सीनियर सिटीजन के दुःख के आगे। और जो कहीं विपत्ति के मारे इन दो में से कोई एक अस्पताल में भर्ती हो गया तो बस पूछिए मत। खुद को भी बचाना है और जीवन साथी को भी। बहुत विकट स्थिति हो जा रही है।

बीती जुलाई , 2020 से मार्च , 2021 तक मैं खुद इन स्थितियों से दो-चार रहा हूं। सांघातिक तबनाव में रहा हूं। लखनऊ का अपोलो अस्पताल जैसे मेरा ठिकाना बन गया था बीते नौ महीने तक। बात-बेबात ग़लत बात पर भिड़ जाने वाला मैं असहाय अपोलो अस्पताल की भयानक लूट का शिकार हो कर भी सिर झुका कर खड़ा रहा। कि जाने फिर कोई अस्पताल साथ देगा कि नहीं। और फिर लूट में कौन अस्पताल नहीं शामिल नहीं है। सरकारी अस्पताल जाने लायक नहीं रहे। छोटे नर्सिंग होम में डाक्टर ही नहीं हैं। काल पर आते हैं। कई बार कोरोना के बहाने ऐन वक्त पर दांव दे जाते हैं। रह गए बड़े

अस्पताल। पी जी आई , मेदांता , अपोलो , सहारा। सोर्स पर सोर्स लगाने पर भी पी जी आई में कभी बेड ही नहीं खाली रहता। अजब हरामखोरी है। जब बेड ही नहीं रहता कभी तो अस्पताल बनाया ही क्यों।

सहारा अब सरकारी अस्पताल से भी बुरी स्थिति में है। डाक्टर , तीमारदार से मिलते ही नहीं। सिर्फ पैसा जमा करने के लिए फोन आता है। दूसरे , सहारा में डाक्टरों को टारगेट पूरा करना होता है। आप गए हैं लीवर का इलाज कराने , वह आप का हार्ट , किडनी , फेफड़ा सब देख डालते हैं। वह भी आई सी यू में भर्ती कर। आप मरीज से हरदम मिल नहीं सकते। डाक्टर मिलता नहीं। अनाप-शनाप की जांच अलग। मरने के बाद भी आप सारा पैसा क्लियर कर ही पार्थिव शरीर देख सकते हैं। मेदांता का पता नहीं क्या हाल है। पर पैसे की लूट-पाट तो मेदांता में भी सुनता हूं।

अब रह गया अपोलो। तो पत्नी का एक गाल ब्लेडर का आपरेशन वहां मुझे चार चरण में करवाना पड़ा। बाहर चालीस-पचास हज़ार का आपरेशन यहां दस गुना में पड़ गया। नौ-दस लाख रुपए में निकल गया। नौ महीने का समय अलग। यातना और दहशत अलग। कई बार लगा कि जीवन साथी से साथ अब छूटा कि तब छूटा। बहुत कम बोलने वाली पत्नी भी भयानक दर्द और लगातार उलटी के कारण बार-बार बुदबुदातीं , अब हम नहीं बचेंगे। कोरोना के भय और दहशत का आलम अलग था। हां , एक पैसे का फैक्टर छोड़ दें तो अपोलो में सब कुछ ठीक है। डाक्टर तीमारदार से बुला-बुला कर मिलते हैं। दुःख-सुख सुनते हैं। प्रबंधन आ कर बार-बार हाल लेता है। हां , एक गाल ब्लेडर के आपरेशन के लिए अपोलो में भी हर बार , बार-बार किडनी , न्यूरो , हार्ट , चेस्ट आदि जाने किन-किन डाक्टर की विजिट फीस , रोज-रोज जोड़ी गई। अनाप-शनाप जांच अलग। हर बार। अस्पताल से छुट्टी के बाद भी। मरीज के लगातार ड्रिप लगने , भोजन नहीं करने के बाद भी डाइटीशियन की फीस भी रोज। नर्सिंग वगैरह भी। हर सांस और हर बात के पैसे। ऐसे जैसे कोई आप की जेब में हाथ डाल कर पैसे निकाल ले। जबरिया। डाक्टर लोग तरह-तरह का डर , उम्र की हद और कॉम्प्लिकेशन बताते रहे। सो सब भुगतता रहा। यह भी था कि बीच भंवर में फंस कर अब कहां जाएं।

बहुत सी कथाएं और बहुत से मोड़ इस नौ महीने में भुगते हैं। बीच में कभी दो-चार दिन के लिए नोएडा से बेटा आ गया तो कभी वेल्लोर से बेटी। वेल्लोर से चल कर दामाद भी आए। पर कितने दिन कोई रह सकता था भला। लखनऊ के लोग कोरोना के नाम पर दूर ही दूर रहे। अस्पताल आते-जाते कोरोना की चपेट में भी हम पति-पत्नी आए। बेटा भी। जुलाई-अगस्त में। पूरी कॉलोनी में अछूत हो गए। खैर , कोरोना को भी चुपचाप परास्त किया। किसी से कुछ कहा नहीं। क्यों कि यह बात बहुत अच्छी तरह जानता हूं कि सुख तो सब को बताना ही चाहिए पर दुःख कभी नहीं। दुःख का विज्ञापन तो कभी नहीं।

सब की सीमा जानता हूं सो लखनऊ के लोगों का कभी बुरा नहीं माना। बचाव ही एकमात्र तरीका है। तो मित्रों , उन तकलीफ़ भरे बुरे दिनों में मुझ अकेले आदमी के काम सिर्फ़ और सिर्फ़ धीरज शब्द ही आया। धीरज बहुत बड़ा शब्द है। बहुत साथ देता है। बहुत से अकेले रह रहे मित्रों की मुश्किल देख कर यह बात भी बतानी पड़ी है। नहीं कभी नहीं बताता। दुःख भी भला बताने की चीज़ है। तो मित्रों दुःख सब के जीवन में है। मेरे जीवन में भी। किसिम-किसिम के दुःख। कोई साथ नहीं आता। सिर्फ़ मृत्यु ही नहीं , दुःख भी अकेले ही भुगतना होता है। अब ज़रा फुर्सत मिली दुःख और इलाज के जाल से तो बेटे के पास

नोएडा आ गया हूं। कि कुछ हवा बदले। कुछ दु:ख बिसरे।

18 फ़रवरी , 1998 को मेरा एक भयानक एक्सीडेंट हुआ था। हमारी अम्बेस्डर की एक ट्रक से आमने-सामने टक्कर हो गई थी। ड्राइवर और हमारे बगल में बैठे हमारे मित्र जय प्रकाश शाही ऐट स्पॉट विदा हो गए थे। तब कोरोना नहीं था सो समूचा लखनऊ मेरे साथ था। अटल जी से लगायत , कल्याण सिंह , मुलायम सिंह यादव जैसे तमाम राजनीतिज्ञों , नौकरशाहों , पत्रकारों ने अद्भुत साथ दिया था। हर समय आते-जाते और घेरे रहते थे। अम्मा , पिता जी का साथ और आशीर्वाद साथ था। लक्ष्मण , भरत , शत्रुघन जैसे भाई थे सेवा के लिए। तो भी अंग-अंग दुखता था। हिलना-डुलना मुश्किल था। बोलना मुश्किल था। पूरा चेहरा और जबड़ा टूट जाने के कारण दोनों जबड़े सिल दिए गए थे। चेहरा सिर से बड़ा हो गया था। पानी पीना भी दूभर था। हाथ टूट गया था। पसलियां टूट गई थीं। बाद में दाईं आंख की दोनों पलकें भी सिल दी गईं। जिन आंखों में सपने दीखते हैं , वह आंख सिल जाना कितना तकलीफदेह था , मैं ही जानता हूं। एक बार भारी दर्द से अकुला कर इलाज कर रहे डाक्टर प्रधान से कहा कि मुझे मार क्यों नहीं डालते ? तो वह छूटते ही बोले , वह पांडेय जी , आप को तो दर्द से छुट्टी मिल जाएगी पर मुझे जेल हो जाएगी।

फिर एक दिन मैं ने डाक्टर प्रधान से कहा कि ऐसा नहीं हो सकता कि जैसे लोग पैसा , भोजन आदि तमाम चीज़ें कम पड़ने पर एक दूसरे से शेयर कर लेते हैं। दु:ख-सुख बांट लेते हैं तो दर्द भी आपस में बांट लें ? डाक्टर प्रधान ने पूछा , कौन आप का दर्द शेयर करेगा ? मैं ने कहा , हमारे घर वाले। जानने वाले। वहां उपस्थित लोगों ने हामी भी भरी। डाक्टर प्रधान मेरे घायल चेहरे पर ज़रा झुके। हरदम अकड़ कर बोलने वाले डाक्टर प्रधान की आंख भर आई। मेरा माथा सहलाते हुए बोले , सारी मिस्टर पांडेय , यह भी नहीं हो पाएगा। और जहाज की तरह कमरे से बाहर निकल गए। अम्मा ने मुझे संभाला। और खुद रोती हुई मेरा माथा सहलाती हुई बोली , बाबू , धीरज रक्खा। हिम्मत से काम ल ! तो अम्मा का कहा और तुलसी दास का लिखा धीरज इन कठिन दिनों में बहुत काम आया है। आता ही रहता है। सब के ही काम आता है। फ़िल्म अमृत के लिए आनंद बक्षी का लिखा एक गीत है न :

दुनिया में कितना गम है
मेरा गम कितना कम है
लोगों का गम देखा तो
मैं अपना गम भूल गया।

तो अपना ग़म भूलिए। दु:ख भूलिए , धीरज याद रखिए। सिर्फ़ धीरज। सर्वदा यही काम आता है। कोई और नहीं। समय मिले तो टी वी न्यूज़ कम देखिए। बल्कि मत देखिए। अच्छे-अच्छे , मनपसंद गाने सुनिए। सिनेमा देखिए। मित्रों से फ़ोन पर , वीडियो पर बात कीजिए। दु:ख का नहीं , सुख का स्मरण कीजिए। दु:ख का विज्ञापन तो हरगिज नहीं। धीरज की डोरी से बंधे रहिए। चोरी-चोरी ही सही। ठीक उस गाने की तरह कि हम तुम चोरी से , बंधे एक डोरी से / जइयो कहां ए हुज़ूर ! धीरज बड़ी चीज़ है , मुंह ढंक के सोइए !

साभार- http://sarokarnama.blogspot.com/2021/04/blog-post_21.html से